सरस्वती का मन्थरा की बुद्धि फेरना, कैकेयी-मन्थरा संवाद, प्रजा में खुशी

चौपाई :

*** दीख मंथरा नगरु बनावा। मंजुल मंगल बाज बधावा॥ पूछेसि लोगन्ह काह उछाहू। राम तिलकु सुनि भा उर दाहू॥1॥

भावार्थ:

मंथरा ने देखा कि नगर सजाया हुआ है। सुंदर मंगलमय बधावे बज रहे हैं। उसने लोगोंसे पूछा कि कैसा उत्सव है? (उनसे) श्री रामचन्द्रजी के राजतिलक की बात सुनते ही उसका हृदय जल उठा॥1॥

*** करइ बिचारु कुबुद्धि कुजाती। होइ अकाजु कवनि बिधि राती॥ देखि लागि मधु कुटिल किराती। जिमि गवँ तकइ लेउँ केहि भाँती॥2॥

भावार्थ:

वह दुर्बुद्धि, नीच जाति वाली दासी विचार करने लगी कि किस प्रकार से यह काम रात ही रात में बिगड़ जाए, जैसे कोई कुटिल भीलनी शहद का छत्ता लगा देखकर घात लगाती है कि इसको किस तरह से उखाड़ लूँ॥2॥

*** भरत मातु पहिं गइ बिलखानी। का अनमनि हसि कह हँसि रानी॥ ऊतरु देइ न लेइ उसासू। नारि चरित करि ढारइ आँसू॥3॥

भावार्थ:

वह उदास होकर भरतजी की माता कैकेयी के पास गई। रानी कैकेयी ने हँसकर कहा- तू उदास क्यों है? मंथरा कुछ उत्तर नहीं देती, केवल लंबी साँस ले रही है और त्रियाचरित्र करके आँसू ढरका रही है॥3॥

*** हँसि कह रानि गालु बड़ तोरें। दीन्ह लखन सिख अस मन मोरें॥ तबहुँ न बोल चेरि बड़ि पापिनि। छाड़इ स्वास कारि जनु साँपिनि॥4॥

भावार्थ:

रानी हँसकर कहने लगी कि तेरे बड़े गाल हैं (तू बहुत बढ़बढ़कर बोलने वाली है)। मेरा मन कहता है कि लक्ष्मण ने तुझे कुछ सीख दी है (दण्ड दिया है)। तब भी वह महापापिनी दासी कुछ भी नहीं बोलती। ऐसी लंबी साँस छोड़ रही है, मानो काली नागिन (फुफकार छोड़ रही) हो॥4॥

दोहा :

*** सभय रानि कह कहसि किन कुसल रामु महिपालु। लखनु भरतु रिपुदमनु सुनि भा कुबरी उर सालु॥13॥

भावार्थ:

तब रानी ने डरकर कहा- अरी! कहती क्यों नहीं? श्री रामचन्द्र, राजा, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न कुशल से तो हैं? यह सुनकर कुबरी मंथरा के हृदय में बड़ी ही पीड़ा हुई॥13॥

चौपाई :

*** कत सिख देइ हमहि कोउ माई। गालु करब केहि कर बलु पाई॥ रामहि छाड़ि कुसल केहि आजू। जेहि जनेसु देइ जुबराजू॥1॥

भावार्थ:

(वह कहने लगी-) हे माई! हमें कोई क्यों सीख देगा और मैं किसका बल पाकर गाल करूँगी (बढ़-बढ़कर बोलूँगी)। रामचन्द्र को छोड़कर आज और किसकी कुशल है, जिन्हें राजा युवराज पद दे रहे हैं॥1॥

*** भयउ कौसिलहि बिधि अति दाहिन। देखत गरब रहत उर नाहिन॥ देखहु कस न जाइ सब सोभा। जो अवलोकि मोर मनु छोभा॥2॥

भावार्थ:

आज कौसल्या को विधाता बहुत ही दाहिने (अनुकूल) हुए हैं, यह देखकर उनके हृदय में गर्व समाता नहीं। तुम स्वयं जाकर सब शोभा क्यों नहीं देख लेतीं, जिसे देखकर मेरे मन में क्षोभ हुआ है॥2॥

*** पूतु बिदेस न सोचु तुम्हारें। जानति हहु बस नाहु हमारें॥ नीद बहुत प्रिय सेज तुराई। लखहु न भूप कपट चतुराई॥3॥

भावार्थ:

तुम्हारा पुत्र परदेस में है, तुम्हें कुछ सोच नहीं। जानती हो कि स्वामी हमारे वश में हैं। तुम्हें तो तोशक-पलँग पर पड़े-पड़े नींद लेना ही बहुत प्यारा लगता है, राजा की कपटभरी चतुराई तुम नहीं देखतीं॥3॥

***सुनि प्रिय बचन मलिन मनु जानी। झुकी रानि अब रहु अरगानी॥ पुनि अस कबहुँ कहसि घरफोरी। तब धरि जीभ कढ़ावउँ तोरी॥4॥

भावार्थ:

मन्थरा के प्रिय वचन सुनकर, किन्तु उसको मन की मैली जानकर रानी झुककर (डाँटकर) बोली- बस, अब चुप रह घरफोड़ी कहीं की! जो फिर कभी ऐसा कहा तो तेरी जीभ पकड़कर निकलवा लूँगी॥4॥

दोहा :

*** काने खोरे कूबरे कुटिल कुचाली जानि। तिय बिसेषि पुनि चेरि कहि भरतमातु मुसुकानि॥14॥

भावार्थ:

कानों, लंगड़ों और कुबड़ों को कुटिल और कुचाली जानना चाहिए। उनमें भी स्त्री और खासकर

दासी! इतना कहकर भरतजी की माता कैकेयी मुस्कुरा दीं॥14॥

चौपाई :

*** प्रियबादिनि सिख दीन्हिउँ तोही। सपनेहुँ तो पर कोपु न मोही॥ सुदिनु सुमंगल दायकु सोई। तोर कहा फुर जेहि दिन होई॥1॥

भावार्थ:

(और फिर बोलीं-) हे प्रिय वचन कहने वाली मंथरा! मैंने तुझको यह सीख दी है (शिक्षा के लिए इतनी बात कही है)। मुझे तुझ पर स्वप्न में भी क्रोध नहींहै। सुंदर मंगलदायक शुभ दिन वही होगा, जिस दिन तेरा कहना सत्य होगा (अर्थात श्री राम का राज्यतिलक होगा)॥1॥

*** जेठ स्वामि सेवक लघु भाई। यह दिनकर कुल रीति सुहाई॥ राम तिलकु जौं साँचेहुँ काली। देउँ मागु मन भावत आली॥2॥

भावार्थ:

बड़ा भाई स्वामी और छोटा भाई सेवक होता है। यह सूर्यवंश की सुहावनी रीति ही है। यदि सचमुच कल ही श्री राम का तिलक है, तो हे सखी! तेरे मन को अच्छी लगे वही वस्तु माँग ले, मैं दूँगी॥2॥

*** कौसल्या सम सब महतारी। रामहि सहज सुभायँ पिआरी॥ मो पर करहिं सनेहु बिसेषी। मैं करि प्रीति परीछा देखी॥3॥

भावार्थ:

राम को सहज स्वभाव से सब माताएँ कौसल्या के समान ही प्यारी हैं। मुझ पर तो वे विशेष प्रेम करते हैं। मैंने उनकी प्रीति की परीक्षा करके देख ली है॥3॥

*** जौं बिधि जनमु देइ करि छोहू। होहुँ राम सिय पूत पुतोहू॥ प्रान तें अधिक रामु प्रिय मोरें। तिन्ह कें तिलक छोभु कस तोरें॥4॥

भावार्थ:

जो विधाता कृपा करके जन्म दें तो (यह भी दें कि) श्री रामचन्द्र पुत्र और सीता बहू हों। श्री राम मुझे प्राणों से भी अधिक प्रिय हैं। उनके तिलक से (उनके तिलक की बात सुनकर) तुझे क्षोभ कैसा?॥4॥

दोहा :

*** भरत सपथ तोहि सत्य कहु परिहरि कपट दुराउ। हरष समय बिसमउ करसि कारन मोहि सुनाउ॥15॥

भावार्थ:

तुझे भरत की सौगंध है, छल-कपट छोड़कर सच-सच कह। तू हर्ष के समय विषाद कर रही है, मुझे इसका कारण सुना॥15॥

चौपाई :

*** एकहिं बार आस सब पूजी। अब कछु कहब जीभ करि दूजी॥ फोरै जोगु कपारु अभागा। भलेउ कहत दुख रउरेहि लागा॥1॥

भावार्थ:

(मंथरा ने कहा-) सारी आशाएँ तो एक ही बार कहने में पूरी हो गईं। अब तो दूसरी जीभ लगाकर कुछ कहूँगी। मेरा अभागा कपाल तो फोड़ने ही योग्य है जो अच्छी बात कहने पर भी आपको दुःख होता है॥1॥

*** कहहिं झूठि फुरि बात बनाई। ते प्रिय तुम्हहि करुइ मैं माई॥ हमहुँ कहबि अब ठकुरसोहाती। नाहिं त मौन रहब दिनु राती॥2॥

भावार्थ:

जो झूठी-सच्ची बातें बनाकर कहते हैं, हे माई! वे ही तुम्हें प्रिय हैं और मैं कड़वी लगती हूँ! अब मैं भी ठकुरसुहाती (मुँह देखी) कहा करूँगी। नहीं तो दिन-रात चुप रहूँगी॥2॥

*** करि कुरूप बिधि परबस कीन्हा। बवा सो लुनिअ लहिअ जो दीन्हा॥ कोउ नृप होउ हमहि का हानी। चेरि छाड़ि अब होब कि रानी॥3॥

भावार्थ:

विधाता ने कुरूप बनाकर मुझे परवश कर दिया! (दूसरे को क्या दोष) जो बोया सो काटती हूँ, दिया सो पाती हूँ। कोई भी राजा हो, हमारी क्या हानि है? दासी छोड़कर क्या अब मैं रानी होऊँगी! (अर्थात रानी तो होने से रही)॥3॥

*** जारै जोगु सुभाउ हमारा। अनभल देखि न जाइ तुम्हारा॥ तातें कछुक बात अनुसारी। छमिअ देबि बड़ि चूक हमारी॥4॥

भावार्थ:

हमारा स्वभाव तो जलाने ही योग्य है, क्योंकि तुम्हारा अहित मुझसे देखा नहीं जाता, इसलिए कुछ बात चलाई थी, किन्तु हे देवी! हमारी बड़ी भूल हुई, क्षमा करो॥4॥

दोहा :

*** गूढ़ कपट प्रिय बचन सुनि तीय अधरबुधि रानि। सुरमाया बस बैरिनिहि सुहृद जानि पतिआनि॥16॥

भावार्थ:

आधाररहित (अस्थिर) बुद्धि की स्त्री और देवताओं की माया के वश में होने के कारण रहस्ययुक्त कपट भरे प्रिय वचनों को सुनकर रानी कैकेयी ने बैरिन मन्थरा को अपनी सुहृद् (अहैतुक हित करने वाली) जानकर उसका विश्वास कर लिया॥16॥

चौपाई :

*** सादर पुनि पुनि पूँछति ओही। सबरी गान मृगी जनु मोही॥ तसि मति फिरी अहइ जसि भाबी। रहसी चेरि घात जनु फाबी॥1॥

भावार्थ:

बार-बार रानी उससे आदर के साथ पूछ रही है, मानो भीलनी के गान से हिरनी मोहित हो गई हो। जैसी भावी (होनहार) है, वैसी ही बुद्धि भी फिर गई। दासी अपना दाँव लगा जानकर हर्षित हुई॥1॥

*** तुम्ह पूँछहु मैं कहत डेराउँ। धरेहु मोर घरफोरी नाऊँ॥ सजि प्रतीति बहु बिधि गढ़ि छोली। अवध साढ़साती तब बोली॥2॥

भावार्थ:

तुम पूछती हो, किन्तु मैं कहते डरती हूँ, क्योंकि तुमने पहले ही मेरा नाम घरफोड़ी रख दिया है। बहुत तरह से गढ़-छोलकर, खूब विश्वास जमाकर, तब वह अयोध्या की साढ़ साती (शनि की साढ़े साती वर्ष की दशा रूपी मंथरा) बोली-॥2॥

*** प्रिय सिय रामु कहा तुम्ह रानी। रामहि तुम्ह प्रिय सो फुरि बानी॥ रहा प्रथम अब ते दिन बीते। समउ फिरें रिपु होहिं पिरीते॥3॥

भावार्थ:

हे रानी! तुमने जो कहा कि मुझे सीता-राम प्रिय हैं और राम को तुम प्रिय हो, सो यह बात सच्ची है, परन्तु यह बात पहले थी, वे दिन अब बीत गए। समय फिर जाने पर मित्र भी शत्रु हो जाते हैं॥3॥

*** भानु कमल कुल पोषनिहारा। बिनु जल जारि करइ सोइ छारा॥ जरि तुम्हारि चह सवति उखारी। रूँधहु करि उपाउ बर बारी॥4॥

भावार्थ:

सूर्य कमल के कुल का पालन करने वाला है, पर बिना जल के वही सूर्य उनको (कमलों को) जलाकर भस्म कर देता है। सौत कौसल्या तुम्हारी जड़ उखाड़ना चाहती है। अतः उपाय रूपी श्रेष्ठ बाड़ (घेरा) लगाकर उसे रूँध दो (सुरक्षित कर दो)॥4॥

दोहा :

*** तुम्हहि न सोचु सोहाग बल निज बस जानहु राउ। मन मलीन मुँह मीठ नृपु राउर सरल सुभाउ॥17॥

भावार्थ:

तुमको अपने सुहाग के (झूठे) बल पर कुछ भी सोच नहीं है, राजा को अपने वश में जानती हो, किन्तु राजा मन के मैले और मुँह के मीठे हैं! और आपका सीधा स्वभाव है (आप कपट-चतुराई जानती ही नहीं)॥17॥

चौपाई :

*** चतुर गँभीर राम महतारी। बीचु पाइ निज बात सँवारी॥ पठए भरतु भूप ननिअउरें। राम मातु मत जानब रउरें॥1॥

भावार्थ:

राम की माता (कौसल्या) बड़ी चतुर और गंभीर है (उसकी थाह कोई नहीं पाता)। उसने मौका पाकर अपनी बात बना ली। राजा ने जो भरत को ननिहाल भेज दिया, उसमें आप बस राम की माता की ही सलाह समझिए!॥1॥

*** सेवहिं सकल सवति मोहि नीकें। गरबित भरत मातु बल पी कें॥ सालु तुमर कौसिलहि माई। कपट चतुर नहिं होई जनाई॥2॥

भावार्थ:

(कौसल्या समझती है कि) और सब सौतें तो मेरी अच्छी तरह सेवा करती हैं, एक भरत की माँ पति के बल पर गर्वित रहती है! इसी से हे माई! कौसल्या को तुम बहुत ही साल(खटक) रही हो, किन्तु वह कपट करने में चतुर है, अतः उसके हृदय का भाव जानने में नहीं आता (वह उसे चतुरता से छिपाए रखती है)॥2॥

*** राजहि तुम्ह पर प्रेमु बिसेषी। सवति सुभाउ सकइ नहिं देखी॥ रचि प्रपंचु भूपहि अपनाई। राम तिलक हित लगन धराई॥3॥

भावार्थ:

राजा का तुम पर विशेष प्रेम है। कौसल्या सौत के स्वभाव से उसे देख नहीं सकती, इसलिए उसने जाल रचकर राजा को अपने वश में करके, (भरत की अनुपस्थिति में) राम के राजतिलक के लिए लग्न निश्चय करा लिया॥3॥

*** यह कुल उचित राम कहुँ टीका। सबहि सोहाइ मोहि सुठि नीका॥ आगिलि बात समुझि डरु मोही। देउ दैउ फिरि सो फलु ओही॥4॥

भावार्थ:

राम को तिलक हो, यह कुल (रघुकुल) के उचित ही है और यह बात सभी को सुहाती है और मुझे तो बहुत ही अच्छी लगती है, परन्तु मुझे तो आगे की बात विचारकर डर लगता है। दैव उलटकर इसका फल उसी (कौसल्या) को दे॥4॥

दोहा :

*** रचि पचि कोटिक कुटिलपन कीन्हेसि कपट प्रबोधु। कहिसि कथा सत सवति कै जेहि बिधि बाढ़ बिरोधु॥18॥

भावार्थ:

इस तरह करोड़ों कुटिलपन की बातें गढ़-छोलकर मन्थरा ने कैकेयी को उलटा-सीधा समझा दिया और सैकड़ों सौतों की कहानियाँ इस प्रकार (बना-बनाकर) कहीं जिस प्रकार विरोध बढ़े॥18॥

चौपाई :

*** भावी बस प्रतीति उर आई। पूँछ रानि पुनि सपथ देवाई॥ का पूँछहु तुम्ह अबहुँ न जाना। निज हित अनहित पसु पहिचाना॥1॥

भावार्थ:

होनहार वश कैकेयी के मन में विश्वास हो गया। रानी फिर सौगंध दिलाकर पूछने लगी। (मंथरा बोली-) क्या पूछती हो? अरे, तुमने अब भी नहीं समझा? अपने भले-बुरे को (अथवा मित्र-शत्रु को) तो पशु भी पहचान लेते हैं॥1॥

*** भयउ पाखु दिन सजत समाजू। तुम्ह पाई सुधि मोहि सन आजू॥ खाइअ पहिरिअ राज तुम्हारें। सत्य कहें नहिं दोषु हमारें॥2॥

भावार्थ:

पूरा पखवाड़ा बीत गया सामान सजते और तुमने खबर पाई है आज मुझसे! मैं तुम्हारे राज में खाती-पहनती हूँ, इसलिए सच कहने में मुझे कोई दोष नहीं है॥2॥

*** जौं असत्य कछु कहब बनाई। तौ बिधि देइहि हमहि सजाई॥ रामहि तिलक कालि जौं भयऊ। तुम्ह कहुँ बिपति बीजु बिधि बयऊ॥3॥

भावार्थ:

यदि मैं कुछ बनाकर झूठ कहती होऊँगी तो विधाता मुझे दंड देगा। यदि कल राम को राजतिलक हो गया तो (समझ रखना कि) तुम्हारे लिए विधाता ने विपत्ति का बीज बो दिया॥3॥

*** रेख खँचाइ कहउँ बलु भाषी। भामिनि भइहु दूध कइ माखी॥ जौं सुत सहित करहु सेवकाई। तौ घर रहहु न आन उपाई॥4॥

भावार्थ:

मैं यह बात लकीर खींचकर बलपूर्वक कहती हूँ, हे भामिनी! तुम तो अब दूध की मक्खी हो गई! (जैसे दूध में पड़ी हुई मक्खी को लोग निकालकर फेंक देते हैं, वैसे ही तुम्हें भी लोग घर से निकाल बाहर करेंगे) जो पुत्र सहित (कौसल्या की) चाकरी बजाओगी तो घर में रह सकोगी, (अन्यथा घर में रहने का) दूसरा उपाय नहीं॥4॥

दोहा :

*** कद्रूँ बिनतहि दीन्ह दुखु तुम्हहि कौसिलाँ देब। भरतु बंदिगृह सेइहहिं लखनु राम के नेब॥19॥

भावार्थ:

कद्रू ने विनता को दुःख दिया था, तुम्हें कौसल्या देगी। भरत कारागार का सेवन करेंगे (जेल की हवा खाएँगे) और लक्ष्मण राम के नायब (सहकारी) होंगे॥19॥

चौपाई :

*** कैकयसुता सुनत कटु बानी। कहि न सकइ कछु सहमि सुखानी॥ तन पसेउ कदली जिमि काँपी। कुबरीं दसन जीभ तब चाँपी॥1॥

भावार्थ:

कैकेयी मन्थरा की कड़वी वाणी सुनते ही डरकर सूख गई, कुछ बोल नहीं सकती। शरीर में पसीना हो आया और वह केले की तरह काँपने लगी। तब कुबरी (मंथरा) ने अपनी जीभ दाँतों तले दबाई (उसे भय हुआ कि कहीं भविष्य का अत्यन्त डरावना चित्र सुनकर कैकेयी के हृदय की गति न

रुक जाए, जिससे उलटा सारा काम ही बिगड़ जाए)॥1॥

*** कहि कहि कोटिक कपट कहानी। धीरजु धरहु प्रबोधिसि रानी॥ फिरा करमु प्रिय लागि कुचाली। बकिहि सराहइ मानि मराली॥2॥

भावार्थ:

फिर कपट की करोड़ों कहानियाँ कह-कहकर उसने रानी को खूब समझाया कि धीरज रखो! कैकेयी का भाग्य पलट गया, उसे कुचाल प्यारी लगी। वह बगुली को हंसिनी मानकर (वैरिन को हित मानकर) उसकी सराहना करने लगी॥2॥

*** सुनु मंथरा बात फुरि तोरी। दहिनि आँखि नित फरकइ मोरी॥ दिन प्रति देखउँ राति कुसपने। कहउँ न तोहि मोह बस अपने॥3॥

भावार्थ:

कैकेयी ने कहा- मन्थरा! सुन, तेरी बात सत्य है। मेरी दाहिनी आँख नित्य फड़का करती है। मैं प्रतिदिन रात को बुरे स्वप्न देखती हूँ, किन्तु अपने अज्ञानवश तुझसे कहती नहीं॥3॥

*** काह करौं सखि सूध सुभाऊ। दाहिन बाम न जानउँ काऊ॥4॥

भावार्थ:

सखी! क्या करूँ, मेरा तो सीधा स्वभाव है। मैं दायाँ-बायाँ कुछ भी नहीं जानती॥4॥

दोहा :

*** अपनें चलत न आजु लगि अनभल काहुक कीन्ह। केहिं अघएकहि बार मोहि दैअँ दुसह दुखु दीन्ह॥20॥

भावार्थ:

अपनी चलते (जहाँ तक मेरा वश चला) मैंने आज तक कभी किसी का बुरा नहीं किया। फिर न जाने किस पाप से दैव ने मुझे एक ही साथ यह दुःसह दुःख दिया॥20॥

चौपाई :

*** नैहर जनमु भरब बरु जाई। जिअत न करबि सवति सेवकाई॥ अरि बस दैउ जिआवत जाही। मरनु नीक तेहि जीवन चाही॥1॥

भावार्थ:

मैं भले ही नैहर जाकर वहीं जीवन बिता दूँगी, पर जीते जी सौत की चाकरी नहीं करूँगी। दैव जिसको शत्रु के वश में रखकर जिलाता है, उसके लिए तो जीने की अपेक्षा मरना ही अच्छा है॥1॥

दीन बचन कह बहुबिधि रानी। सुनि कुबरीं तियमायाठानी॥

*** दीन बचन कह बहुबिधि रानी। सुनि कुबरीं तियमाया ठानी॥ अस कस कहहु मानि मन ऊना। सुखु सोहागु तुम्ह कहुँ दिन दूना॥1॥

भावार्थ:

रानी ने बहुत प्रकार के दीन वचन कहे। उन्हें सुनकर कुबरी ने त्रिया चरित्र फैलाया। (वह बोली-)

तुम मन में ग्लानि मानकर ऐसा क्यों कह रही हो, तुम्हारा सुख-सुहाग दिन-दिन दूना होगा॥2॥

*** जेहिं राउर अति अनभल ताका। सोइ पाइहि यहु फलु परिपाका॥ जब तें कुमत सुना मैं स्वामिनि। भूख न बासर नींद न जामिनि॥3॥

भावार्थ:

जिसने तुम्हारी बुराई चाही है, वही परिणाम में यह (बुराई रूप) फल पाएगी। हे स्वामिनि! मैंने जब से यह कुमत सुना है, तबसे मुझे न तो दिन में कुछ भूख लगती है और न रात में नींद ही आती है॥3॥

*** पूँछेउँ गुनिन्ह रेख तिन्ह खाँची। भरत भुआल होहिं यह साँची॥ भामिनि करहु त कहौं उपाऊ। है तुम्हरीं सेवा बस राऊ॥4॥

भावार्थ:

मैंने ज्योतिषियों से पूछा, तो उन्होंने रेखा खींचकर (गणित करके अथवा निश्चयपूर्वक) कहा कि भरत राजा होंगे, यह सत्य बात है। हे भामिनि! तुम करो तो उपाय मैं बताऊँ। राजा तुम्हारी सेवा के वश में हैं ही॥4॥

दोहा :

*** परउँ कूप तुअ बचन पर सकउँ पूत पति त्यागि। कहसि मोर दुखु देखि बड़ कस न करब हित लागि॥21॥

भावार्थ:

(कैकेयी ने कहा-) मैं तेरे कहने से कुएँ में गिर सकती हूँ, पुत्र और पति को भी छोड़ सकती हूँ। जब तू मेरा बड़ा भारी दुःख देखकर कुछ कहती है, तो भला मैं अपने हित के लिए उसे क्यों न करूँगी॥21॥